समकालीन हिंदी कविता का निहितार्थ

प्रो०मृत्युंजय उपाध्याय, डी० लिट

कविता के बारे में भले ही बीच-बीच में निराशावादी स्वर उठने लगे कि कविता मरती जा रही है पर जब तक जीवन धड़कता है साँसे चलती हैं, कविता जीवित रहेगी | प्रत्येक वर्ष भारत की ज़मीन पर कितने ही काव्य-संग्रह प्रकाशित होते हैं | कुछ चर्चित होते हैं | उनकी नोटिस ली जाती है |कुछ पर ध्यान जाता ही नहीं पर कविताएँ वहां भी हैं | अर्थायन, बिबग्रहण दोनों वहां हैं | यूनुस खान की कविताएँ जीवन की जटिलता पर छाए कुहासे की पर्त को एक तेजस्वी प्रकाश से बेधकर उधेड़ देतीं हैं | वह साफ़-साफ़ दिखाई देता है | वह आकाशवाणी से जुडी युवा प्रतिभा है | फिल्म और संगीत की परंपरा और उसके आधुनिक स्वरूप पर उनकी गहरी समझ है | उनकी कविताओं की भाषा तमाम विसंगतियों, प्रतिरोध और विषमताओं को भी एक सहज प्रवाह की तरह अभिव्यक्त करती है | यह एक ऐसा सरित प्रवाह है, जो गहन संवेदनों, सही शिल्प और सहजभाषा की कलकल संगीतमयी ध्वनियों के साथ पाठक के भीतर गहरे उतर जाता है | कविता में संप्रेषणीयता को समझना हो, तो 'साईकिल सीखती लड़की' देखि जा सकती है, जिसमें युवा कवि एक द्श्यबंध रचता है | वहाँ कविता पाठ और साईकिल चलाती लड़की के साईकिल सीखने के समांतर द्श्य के जरिए वह वर्तमान साहित्य जगत का पूरा सच ही सामने नहीं लाते बल्कि उसे साईकिल सीखनेवाली लड़की के समानांतर खड़ा कर देते हैं :

"कविताओं और लड़की ने शुरू किया है चलना एक साथ | देखना ये है कि कविताएँ आगे निकलती हैं लड़की से या लड़की पछाड़ देती है कविताओं को"|

(समावर्तन, जून २०१८, पृ. 27)

यहाँ 'घुसपैठ' 'बारिस' 'दोष तुम्हारा' 'छोटे शहर के लड़के' आदि भी मानवीय संवेदना की गहनाभिव्यक्ति हैं : "और भाई का चेहरा लगा दफ्तर सहकर्मी की तरह दोस्त कायर, डरपोक और कमीने लगे इस बार"| (इस बार)

संदीप नाईक की कविताएँ हैं 'मुंबई में प्रेम' (1,2,3,4,5,6) जहाँ सर्वत्र जोड़-तोड़, हिसाब-किताब यानी व्यवहार शास्त्र का गणित हल होता रहता है | एक कविता में लड़का दुबई जाना चाहता है ताकि इतना कमा ले कि नरीमन प्वाइंट पर ले पाए एक फ़्लैट | प्यार करनेवाली प्रेमिका सोचती है वह लौटे या नहीं लौटे या फिर किसी अन्य के साथ लौटे | तो फिर वर्तमान को भुना लिया जाए अच्छी तरह | लड़के को उसकी ईमानदारी में शक है | इधर लड़की वर्तमान लाभ को भला हाथ से कैसे जाने दे

लड़की कहती है एक बर्गर और खालूँ

पानी की बोतल से पानी ख़त्म हो गया है |

(समावर्तन, पृ. 30)

इसी में 'चीज़ें' कविता का कवि सोचता है कि सारी चीजें, माल असबाब, कपडे-लत्ते कितने करीने से संभालकर रखे गए हैं | कुछ पुराने अनुपयोगी जानकर अलग कर दिए गए हैं | कवि की उम्र का एक बड़ा हिस्सा गुज़र चुका है सामानों की हिफाजत करने में | कहीं वह भी चीज ही न हो जाए :

अब डर लगने लगा है / कि कहीं मैं भी / होकर न रह जाऊं चीज|

(उपरिवत् पृ. 31)

बाल कवि बैरागी (१० फरवरी १९३१-१३ मई २०१८) को श्रीराम देव ने समावर्तन (जून २०१८) में श्रद्धांजलि दी है | यह बालकवि जी ही थे, जिन्हें कविता का मंच सिद्ध था | मालवी और हिंदी के अनूठे गीतकार के साथ-साथ वह कहानीकार, निबंधकार भी ऊंचे दर्जे के थे | उनकी स्मृतियों को प्रणाम निवेदित करते हुए श्रीराम दवे ने उनकी ही पंक्तियों से उन्हें प्रणाम और श्रद्धांजलि अर्पित किया है :

जो कुछ भी हो रहा बिलकुल नहीं सुहाता

अपनी ही किरकिरी है सहनी पड़ेगी भाई |

जो बच सके बचालो-मुस्कान को संभालो

आँखें अगर भरी हैं सहनी पड़ेगी भाई |

(समावर्तन, जून २०१८, पृ. 65)

विषमता-विपरीतता के बीच संयम, धैर्य और सहिष्णुता से काम चलाना कितना कठिन हो जाता है, इसका क्षण-क्षण बोध होता है | पवन वर्मा की तीन कविताएँ हैं यहाँ : 'रोज की तरह' 'चीजें' 'यह इतना आसान नहीं' | मनुष्य विषमता, बाधाओं, विघ्नों से लड़ता-भिड़ता बढ़ता ही जाता है आगे और आगे | परन्तु एक दिन थक जाता है | हो जाता है पस्त और सारे हथियार देता है डाल | फिर उसके लिए आसान नहीं रहता कडवाहट पी जाना, पचाना और बदले में प्रेम और मिठास उगलना | तप्त मरुस्थल में अपनी प्यास पर नियंत्रण रखकर अपने

हिस्से का जल बाँट देना | पथ-भ्रमित का पथ आलोकित करना और अपने-अपने मुखौटों को उतार फैंकना |

'गाँव गली सुनसान' (कुंअर उदय सिंह) में गाँव में तेज़ी से बढ़ता शहरी प्रभाव देखने को मिलता है | एक ओर चाक्यचिक्य है, चहल-पहल है और दूसरी ओर गाँव बैठकर रो रहा है आठ-आठ आंसू | कारण ये चमकतीं खुशियाँ बड़े दाम पर मिलीं हैं | गाँव को करना पडा है भारी त्याग :

गाँव शहर में खुल गए खुशियों के बाज़ार |

लाएं ख़ुशी खरीदकर भले बिकें घर बार ||

(समावर्तन, जून २०१८, पृ. 31)

'जगत बने मनमीत' : डॉ. देवेन्द्र आर्य में देश की ज्वलंत समस्याओं का चित्रण है | मूल्य संकट, असहिष्णुता, वोट के लिए हर तरह का तिकड़म, जातिवाद, फिरकापरस्त आदि के वर्णन के साथ कवि का आशावाद सर्वत्र मुखरित रहता है कि ऐसा वातावरण बनाया जाए कि सभी मित्र बन जाएँ | पारस्परिकता का विकास हो और हर हाल में मानवता सुरक्षित रहे | निराशा के विरुद्ध आशा का, असफलता के विरुद्ध सफलता का, यह प्रकल्प तभी पूरा होगा, जब रात-रात भर जागकर निरंतर प्रयत्न होगा | 'असंभव' शब्द को कोश से हटा दिया जाएगा | ध्यान रहे कि समय शिला पर घिस-घिस कर अनगढ़ पत्थर शालिग्राम बन जाता है | मंदिरों की शोभा बढाता है | वैसे ही हों हमारे प्रयत्न :

हार न अंतिम साँस तक, हार न मन के भाव |

बुझी बुझी सी आग पर, सुलगाओ कि अलाव ||

(पृ. 72)

जहाँ प्रेम, प्यार, अपनत्व, पारस्परिकता का राग है, वहां असफलता निराशा, पराजय फटकने का नाम भी नहीं लेगी | कर्म का दीपक अहर्निश जलते रहना चाहिए |

विहाग वैभव प्रतिरोध के कवि हैं | कभी वह प्रतिरोध एक बाह्य आवरण धारण करता है तो कभी उस भाव को आत्मसात कर लेता है | उसकी कविता क्रांति का एक उथल नाश न होकर परिवर्तन की वास्तविक आकांक्षा होती है | यह दूसरे प्रकार के युवा कवि हैं | इन्होंने सत्तातंत्र के प्रतिरोध को अपने भीतर जज़्ब कर लिया है और उसे रचना-प्रक्रिया के अनिवार्य अंग की तरह व्यक्त करते हैं | वहां निरर्थक गुस्सा, गालियाँ, चिल्लाहट, चीख या बौखलाहट नहीं मिलेगी जिसे सत्ता तंत्र के किसी चालाक, सेफ्टी वाल्व से भाफ की तरह उड़ाया जा सकता है | वहाँ एक सच्चे प्रतिरोध की दहकती आंच मिलेगी, जिसे विहाग ने अपनी संवेदन-प्रणाली बना लिया है | यह स्वयंसिद्ध है कि ऐसा स्वर सबसे ताकतवर होता है | कारण, यही परिवर्तन के लिए अनिवार्य मानस तैयार करता है | इस कवि की प्रतिभा विलक्षण है | दिलचस्प यह है कि इस कवि ने अपनी सहमती जताने के लिए एक नई भाषा ही नहीं, एक नई वर्णमाला इजाद की है, जिसे विहाग के अलावा कोई और नहीं कर सकता : "होंठ के रंग को करते हुए कत्थई से लाल / जिस भी चुंबन को जिया मैंने / उसी में विलखती रही भगत सिंह की प्रेमिका"| यहाँ घ्यातव्य है कि इतनी कम उम्र में भी इस कवि को शब्द और उसकी अर्थवत्ता का कितना गहरा अहसास है | इस समकाल में शब्दों का कितना चालाक इस्तेमाल किया जा सकता है- इसका कवि को पता

है | इस देश की नागरिकता की नई अर्हताएँ में कवि का देश की दुर्दशा, मूल्यक्षरण, मानवता की हत्या पर कितना करारा व्यंग्य है :

"अपने मस्तिष्क में / धर्म का धुआं भर लो इस कदर / तुम अपनी बेटियों, पत्नियों / और माओं के लिए / कुतिया रंडी और छिनाल / जैसे संबोधनों का / समर्थन कर सके / और सोच सको कि / मेरा-प्रधानमन्त्री इसके समर्थन में है / तो अवश्य ही अपूर्व गौरव की बात है"|

(समावर्तन, जुलाई २०१८, पृ. 20)

आमजन की पीड़ा का कैसा सहभोक्ता है कवि कि एक एक क्षण, घटना, क्रिया, प्रतिक्रिया का वह अनुभूत कथन कर देता है | "बोरे में भरे अन्न को देख किसान मालिक के समक्ष गिडगिडाया / हंसिया जेड हाथों को जोड़कर / अन्न और मालिक की प्रतिक्रिया थी कि योजना भर भभूत दे मारी उसके मुंहपर और कहा भभूत / शोषक की दानवता वहाँ जा सकती है, जहाँ तक शोषित की निरीहता जाती है | इसलिए दिनकर को कहना पड़ा था- "रण रोकना है तो उखाड़ विषदंत फेंको"|

श्री मोहन सपरा ने कविता को कई फ़ार्म में आजमाया है और उन्हें अपनी भाव संवेदना से मालामाल कर आलोचकों के लिए विमर्श का द्वार खोला है | उनकी कविता से संवाद एक संघर्षशील आम आदमी से रू-ब-रू होना है | वह अनागत को सहज ही भाँप लेते है | उनकी कविता में आई तल्खी और विचारोत्तेजकता क्रत्रिम नहीं होकर कविता और समय की मांग है | इसी समय को कवि प्रश्न के निशाने पर लेकर युग धर्म की नब्ज़ टटोलते हैं :

"यह वक्त कैसा है / जब आपको दूर से आ रही / रंग-विरंगी आँधी का / रुख पहचानना है / उसकी नीयत भाँफना है / और समय

से पहले / मुठ्ठियों को तानना है / आँखों को तरेरना है / शरीर को चट्टान बनाना है बनाओ / अब वक्त है"|

(समावर्तन, जुलाई २०१८, पृ. 34)

'अब वक्त है' में सपरा जी वक्त की नजाकत पहचानते हैं और बताते हैं कि समय ऐसा आ गया है कि हमें समय का मसीहा बनना होगा | प्रकाश को नहीं अन्धकार में अपना पथ-प्रशस्त करना होगा | समय ऐसा आ गया है कि नई झाड़ियाँ काट डी जाएँ | नई फसल के लिए ज़मीन तैयार हो | दूसरे देशों से आ रही रंगबिरंगी आँधियों को भी पहचानना होगा और उसकी नीयत को जानना भी | इसका नतीजा यह निकलता है कि समय से पहले अपनी मुठ्ठियों को तानना है | आँखों को तरेरना है और बनाना है शरीर को भारी चट्टान | कवि को सर्वत्र युद्ध ही युद्ध दीखता है | अँगुलियों, आँखों, मन-मस्तिष्क की गुफाओं में | यहाँ तक कि नदी सागर, पहाड़ के गिरते झरनों में भी युद्ध साफ़-साफ़ नज़र आता है | प्रसिद्द कवि स्व० जगदीश चतुर्वेदी की एक टिपण्णी से मोहन सपरा की कवि-कर्म-व्याख्या पर विराम देता है |

"मोहन सपरा की बीच कविताएँ अत्यन्त मार्मिक, सटीक एवं गहन संवेदना से जन्मी है :"

"यह वक्त कैसा है / हथेलियाँ वैशाखियों पर / और मनुष्य एक लम्बी यात्रा पर निकल पडा है |"

यह आज के मनुष्य की समरगाथा है | वैसाखियों पर चलते हुए अनवरत युद्ध में लिप्त | यह संलग्नता कवि कविताओं में ऐसे प्रयोगों से रू-ब-रू कराती है, जो इधर विरल है |

(समावर्तन, जुलाई २०१८, पृ. 39)

दिनेश कुशवाहा की कविताएँ कहीं-कहीं प्रेम मनुहार, रोमान पर टिक जाती हैं तो सुकून मिलता है :

"पहले तो दौड़ी आती थी / अब किस्से कह पाती होगी |"

(अनुत्तरित, समावर्तन,वही, पृ.40)

विन्देश्वर विभा: डॉ. राहुल एक महाकाव्य है | इसमें आधुनिक युग के महानायक डॉ. विन्देश्वर पाठक के क्रियाकलापों का विशद और व्यापक वर्णन मिलता है | वैसे आचार्य नलिन विलोचन शर्मा ने उपन्यास (आलोचना, १९५६) पर विचार करते हुए कहा था कि "समृद्धि और ऐश्वर्य सभ्यता महाकाव्य में अभिव्यंजना पाती है, जीवन की जटिलता, संघर्ष, जद्दोजहद उपन्यासों में |" परन्तु आधुनिक युग में ऐसे महानायक मिल जाएँ जो समाज के उपांत पर खड़े गरीबी, जहालत, भूखमरी में जीते हुए अछूतों मेहतरों के कल्याणार्थ अपना जीवन होम कर दें, तो क्या कहा जाएगा | ऐसा ही चरित्र है महानायक, विन्देश्वर पाठक का | महात्मा गांधी ने अवश्य ही अछूतों के प्रति सद्भावना व्यक्त की, उन्हें अछूतों की जगह 'हरिजन' की संज्ञा दी | हरिवंश राय बच्चन 'बापू के प्रति' कविता में इसकी घोषणा की है :

हिन्दू करते थे सदियों से,

जिसकी क्रूर अवज्ञा,

उन्हीं अछूतों को दी उसने

हरिजन की शुभ संज्ञा |

वहीं डॉ.पाठक ने उनके उपेक्षित जीवन की चर्चा कर उनके उन्नयन का मार्ग प्रशस्त किया- "वही उपेक्षित अज्ञानी बन/निज जीवन को ढोते हैं | सीलन-भरी रूग्णतापोषित/बन कालिख को पोते हैं"| (पृ.65)

कितना कारुणिक, वीभत्स जीवन है अछूतों का, यह देखकर पाठक जी आश्चर्यचकित, ही नहीं हुए, उनके उद्धार का मार्ग तलाशा | उन्हें समाज में विकास की मुख्य धारा से जोड़ा | उनका संकल्प है :

करेंगे हम विकास अस्पर्श्यता-भाव मिटाकर

पशुता के दुर्गम जीवन से इनको मुक्ति दिलाकर |

नारी के प्रति उनकी आदर-भावना, प्रशंसा देखने योग्य है | आज नारी अपने पति, परिवार से ही उपेक्षित है तो समाज भला उसका आदर कैसे करेगा ? अपनी पत्नी अमोला के प्रति उनका उदगार नारी जाति का कितना बड़ा सम्मान है :

तुम्हीं लक्ष्मीरूप अमोला, तुम्हीं सरस्वती प्रतिमा |

तुम्हीं प्रतिष्ठा कर्म-साधना, तुम्हीं सिद्धि में अणिमा ||

(पृ.116)

उन्होंने दो गड्डों वाला शौचालय बनाकर न केवल अछूतोद्धार किया, सिरपर मैला ढोने से उन्हें मुक्ति दिलाई, उन्हें समाज, विकास की मुख्यधारा से जोड़ दिया | उन्हें प्रेरणा दी कि अपना विकास स्वयं करना होगा | उन्हें स्वाभिमान, प्रतिष्ठा के साथ जीना सिखाया | समाज में विकास की मुख्य धारा से जोड़ा |

सात रंग ज़िन्दगी डॉ.पुष्पा चौरसिया, थोड़ी यादें, थोड़ी बातें, थोड़ा डर, सुरेश पबरा, आकाश: वो अकेला (ग़ज़ल संग्रह) आदि भी विचारणीय हैं | जन जाति की बोलियों में सामाजिक, समसामयिक रचनाओं से बोलियों की रचनात्मकता सिद्ध हो रही है | इसमें जनजातियों की अस्मिता और स्वाभिमान का तीव्राक्रोश भी नज़र आता है | गोंडी कवयित्री श्रीमती उर्मिला कुमरे इस समय की प्रमुख रचनाकार हैं | वह लिखती है :

"दरिया ने झरना से पुछा/तुझसे समंदर नहीं बनना क्या? उसने बड़ी नम्रता से कहा/बड़ा बनकर खारा हो जाने से,बेहतर है/मैं छोटा रहकर मीठा ही रहूँ"|

कोहरे में सुबह : ब्रजेश कानूनगो (बोधि प्रकाशन, जयपुर) की प्रत्येक कविता के पार्श्व में उनकी वह दृष्टि है, जो अतीत और वर्तमान के पार जाकर वह सब देख लेता है, जहाँ कई लोग, समाज, पर्यावरण और परिवेश से भी अनभिज्ञ हैं | यहाँ की कविताओं में भूला बिसरा गाँव है | उसकी स्मृतियाँ हैं | अतीत की वर्त्तमान से तुलना करते हुए कवि दोनों के अंतर का अनुभव करने लगता है और समकालीनता से संबद्ध चिंतन भी : "पढता हूँ, अखबार में जब विकास की कोई नई घोषणा/एक गाँव मेरे भीतर मिटने लगता है" | कम शब्दों में अपनी बात कहने का उनका अंदाज़ ही अपना है | यह कहते समय कवि का एक और चेहरा (प्रेम का चेहरा) सामने आता है, जो प्रेम के व्याकरण और गणित में निष्णात है | तभी उसकी अनुभूति की छलक ऐसी हो जाती है :

प्रेम की बात हो तो हर मौसम/बसंत में बदल जाता है |

राजेश सक्सेना की कविताएँ 'प्रवासी नागरिक' 'मधुमालती' 'नींद झुकी हुई टहनी है' भाव, भाषा और प्रभाव की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं | तीसरी कविता सर्वाधिक ध्यानाकर्षक है कि किस प्रकार कवि रात का चित्रांकन करता है | कैसे उसे मानावभावसापेक्ष और सहभोक्ता बना देता है | नींद एक झुकी हुई टहनी की तरह उसकी आँखों के इर्दगिर्द लिपटी रही, यहाँ नींद और स्मृति के बीच सगी बहनों का रिश्ता है | कारण दोनों प्रेमी हैं स्वप्न के | दोनों चल जाते हैं प्रणय के सृष्टिलोक में | यहाँ मधुमालती में उसके रूप सौन्दर्य का व्यापक वितान ताना गया है "उनके सौन्दर्य में / एक प्रेमिल अभिव्यक्ति / एक समुच्चय की तरह / उनके प्राकृतिक गुण सूत्र / सिखाते हैं हमें विनम्रता" | (समावर्तन, मई २०१८, पृ.36)

पारूल तोमर की कविता 'नदी अब भी खुश रहती है' में नदी की आत्मकथा, आत्मस्वीकृति है | किस प्रकार उसने पर्वतों पर उछलना छोड़ दिया | कारण, एक दिन झरने ने उसे टोका कि वह हो गई है बड़ी | अब उछल कूद, धमाचौकड़ी क्या मचाना | बचपना छोड़ देना चाहिए उसे | नदी हो गई मायूस और छोड़ दिया उसने पत्थरों से अलमस्त टकराना | बिना कारण व्रक्षों, लतावितानों से उलझ जाना | अब दुबली, पतली नदी छोडकर अपना स्वाधीन प्रवाह बहने लगी थी | पारूल तोमर बताती हैं कि नदी किनारों में हो पाई पूर्ण | जान पाई स्त्रीत्व की सार्थकता | जनकल्याण में चित्र लगाकर पा गई थी अपनी सार्थकता और वह अब और भी खुश रहने लगी थी |

किशन तिवारी की गजलों में अन्तर्द्वन्द और आत्मसंघर्ष का स्वर तेज है | मन यों तो बहुत चालाक था पर बन गया जाल की मछली और फडफडाता रहा | उसने फैसला करना चाहा पर करे तो क्या करे

वह | कारण, वह झूठ की तराजू पर सच्चाइयाँ तौलता है | फिर निर्णय कैसे किया जाए कितना खरा है आदमी | मनुष्य की कथनी करनी में होगा गहन अंतर तो परिणाम कितना त्रासद हो सकता है, इसकी कल्पना सहज है : "शब्द में नायक बना हर ज़ुल्म से टकरा गया / किन्तु व्यवहारों में उलटी धारणाएं क्या करें" |

(समावर्तन, मई २०१८,पृ.37)

देवेश पथ सारिया की कविताओं का वितान ग्लोबल है | एक ओर वह दुनिया के विभिन्न देशों, वहां के समाज और परिवेश को अपनी कविता का विषय बनाते हैं, तो वहीं दूसरी ओर एक देसी खांटीपन भी उन्हें जकड़े रहता है | दुनियाभर में विचरण करते हुए भी उन्हें पगडण्डीयाँ, प्रेम,और स्थानीय सरोकार भुलाए नहीं भूलता | इसे दो विपरीतों के बीच सामंजस्य के कवि संवेदनों का विस्तार कहा जा सकता है | 'वोदका के तीन जाम' कविता में वह दोस्त के साथ शराब भर नहीं पी रहा बल्कि उसके क्रियाकलापों, दैहिक भाषा और संवादों से उसे नए सिरे से जान्ने, पहचानने की कोशिश भी कर रहा है | "क्रीमिया आने से पहले उसके ई मेल से/जितना नपा-तुला वह लगा रहा था/उससे एकदम अलग है | लिखे हुए से हम हर किसी को पूरा नहीं पहचानते" |

(निरंजन क्षोत्रिय, समावर्तन, अगस्त २०१८, पृ.22)

'वेलेंटाइन सप्ताह में लड़की' अजीब स्वप्न, अरमां, कामनाओं की दुनिया में सैर करती है | उसे डार्क चाकलेट का कडवापन पसंद आने लगा है | वह 'चाकलेट डे' पे एक अदद भेंट पाना चाहती है | सातों दिनों का वर्णन बड़ा रोमांटिक और मादक बन पड़ा है | इस दिवस को कल्पना का निस्सीम आकाश मिला है | इसका न कोई ओर है, न छोर :

"दासों दिशाएँ लालायित होकर ताकती हैं/लड़की को 'हग' और 'किसडे' पर / वह उछाल देती है / निस्सीम में चुंबन और आलिंगन" |

(समावर्तन, अगस्त,२०१८, पृ.23)

'वोदका के तीन जाम' 'तुर्की का व्यापारी' 'चिठ्ठी लिखने का सोंधापन' 'ताइवान' 'तारे और तुम' 'नींद से पहले' 'फटेहाल खजाना' 'वसुधैव कुटुंबकम' 'मास्को की लड़की' 'पहाड़ और पगडंडी' 'विदेश में शोक' की कुछ पंक्तियाँ दिए बिना मन नहीं मानता | इसलिए कि पगडंडीयाँ प्राणवान हो गई है | वे धमनियां और शिराएं है | इनसे गुज़रती हैं गीले और सूखे पत्ते लाती औरतें | सब्जियां बाज़ार ले जाते किसान | ससुराल जाती डोलियाँ | स्कूल जाते बच्चे | पलायन करते परिवार और युवक |

इसी अंक में सुधीर सक्सेना की कविताएँ हैं, जिनसे गांधी जी के संबंध में कवि का विचार जानना बड़ा सुखद प्रतीत होता है | गांधी के अनुसार कवि ने कभी सत्य को ईश्वर नहीं माना वरन अपने ईश्वर को ही सत्य माना | उनका स्वों था कि औरों के अच्छे दिन आएँ एक-न-एक दिन पर प्रतीक्षा का दौर चलता ही रहा | गांधीजी याद आते रहे पर आ कहाँ पाए अच्छे दिन | गोया मनुष्य प्रतीक्षा ही करता रह जाता है | इसकी, उसकी बातें भले ही रखें उसे भुलावे में |

रंजना श्रीवास्तव की तीन कविताएँ हैं-'उसने पत्नियों की कथा लिखी' 'लड़की चाहती है' 'तो चलो धूप की नोक से' | ये कविताएँ इतनी अमूर्त और अप्रस्तुत हैं कि सहज ही पल्ले नहीं पडती पर ध्यान देने से सब कुछ आरपार दिखाई देने लगता है कि एक अच्छे सोच से बुने गए आदमी के पास बुरे वक्त का आइना नहीं होता | वह बस जीना जानता अहि और उसके धडकनों के साथ चलने लगती है पृथ्वी | लड़की चाहती

है अपने स्त्रिपने के बीच की अस्थिरता | वह लोगों के इच्छानुसार ही बनी रही उसके भीतर की स्त्री | परन्तु वह हवा के झरोखे से हँसते हुए चाँद के बारे में सपने देखना नहीं छोड़ती | उसका मन फैला है आकाश की हथेली पर | फैले हुए मन की चमकीली दुनिया में अक्सर घूमती है लड़की |

ब्रजेश कानूनगो का कविता संग्रह है – 'कोहरे में सुबह' (बोधि प्रकाशन, जयपुर ३०२००६) | उनकी प्रत्येक कविता के पार्श्व में उनकी वह दृष्टि है, जो अतीत और वर्तमान के बीच पार जाकर वह सब देख लेती है, जिससे कई लोग, समाज, पर्यावरण और परिवेश भी अनभिज्ञ है |

"शेर/शेर नहीं होता केवल/कवि भी शेर होता है/शेर भी रोता है कभी-कभी की तरह"| ऐसा लगता है कवि आया है किसी पर्यटन पर गाँव | तरोताजा होकर कल लौट जाएगा | संग्रह की कई कविताओं में उसके भूले विसरे गाँव का चित्रं है | गाँव के अतीत और वर्तमान में आ गया है घर अंतर | ग्राम्य विकास की कोई योजना सुनकर उसके भीतर एक गाँव मिटने लगता है :

पढ़ता हूँ, अखबार में जब विकास कि कोई

नई घोषणा एक गाँव मेरे भीतर मिटने लगता है |

कवि का एक और चेहरा है, जो प्रेम के व्याकरण और गणित में निष्णात है | तभी उसकी अनुभूति कुछ यूँ छलकती जाती है :

"प्रेम की बात हो तो हर मौसम/वसंत में बदल जाता है"| प्रेम का इतना अमूर्त, भावात्मक वर्णन दुर्लभ होता जा रहा है : "सुंदर की तरह बजता है गणित प्रेम के राग में"|

अभी हाल में पोयट्री सोसाइटी ऑफ इंडिया और आइ० सी०के तत्वावधान में 'नरेंद्र मोहन : कविता संग्रह' का लोकार्पण हुआ | साथ ही नरेंद्र मोहन की कविता 'ज़िन्दगी का पर्याय' का भी | डॉ. रामदरश मिश्र ने पुस्ताकलोकार्पण समारोह में कहा कि उनकी कविताएँ प्रतिरोध और आत्मसंघर्ष की कविताएँ हैं | मुकेश भारद्वाज ने उनकी कविताओं को भाषा की प्रयोगशाला माना, जिसमें हर तरह के प्रयोग दिखाई पड़ते हैं | "आवाज़ शब्द और शक्ल तीनों में कोई रिश्ता क्यों नहीं है" का उद्धृत करते हुए वे उन्हें आज के मनुष्य को लोकसंग्रही विराट रूप के समकक्ष नारी को रखकर कवयित्री यह सन्देश देना चाहती है कि नारी समर्पण, सृजन, सेवा की साकार विग्रह है | उसे नदी की तरह ही बनना होगा : "नदी पूर्ण थी किनारों में/स्त्रीत्व की सार्थकता जाना/जीवन पा गई थी जनकल्याणों में/नदी अब और भी खुश रहने लगी थी"| उपासना झा की कविताएँ मुखर स्त्री विमर्श की कविताएँ न होकर एक अकेली उदास और अनमनी स्त्री की कविताएँ हैं/कविताओं के मूल में है दुःख एकाकीपन, प्रेम | वे स्त्री मन के विभिन्न पक्षों को खंगालती हैं |

रामवृक्ष बेनपूरी ने 'नीव की ईंट' लेख में लिखा था कि जिसकी नीव में जितनी ही लाल-लाल सुर्ख ईंटें दफ़न होंगी, उसकी इमारत उतनी ही बुलंद होंगी | चाहिए पकी, लाल ईंटों का सात हाथ गहरे अन्धकार में दफ़न होगा | मनीषा जोशी ने 'हमारे देश की माटी' में कुछ ऐसा ही भाव व्यक्त किया है | उसने वीरों को ललकारा है | किसी भी विपरीत परिस्थिति में मुख नहीं मोड़ने का आह्वान किया है :

"समर में आत्मबल तेरा अकेले अग्निपुंज होगा अडिग होगा/ये बल तेरा भले ही कितना छल होगा" | (हमारे देश की माटी : मनीषा जोशी, चक्रवाक, नई दिल्ली, अक्टूबर-मार्च, २०१८, पृ.१०८)

भारतीय संस्कृति में नदियों का बड़ा महत्त्व है | यह सरसाती, हर्षाती है, तो तारती भी है (सगर सुमन सठ सहस परस जल्मात्र उधारिणी: गंगावर्णन: भारतेंदु हरिश्चंद्र) डॉ. राजेन्द्र मिलन की कविता हा 'प्राण रमते हैं नदी में' (चक्रवाक उपरिवत) नदी की पूजा, अर्चना है | उसके गुणों का बखान करते हुए "प्राण रमते हैं नदी में | अटकल नहीं/मानिए संजीवनी ये/कलकल नहीं" | (पृ.१२०) इसी अंक में पंडित सुरेश नीरव की कविता है दर्द गुनगुनाते हैं, जिसमें निरंतर बढ़ते प्रदूषण, ओजोन की परत के छटने, छीजनें पर चिंता व्यक्त की गई है:

टूटती ओजोन परतों ने किया सूरज को बेबस

आतिशी समंदर में प्यास के तराने हैं |

(पृ.84)

मूल्यक्षरण, मानवता की पगपग पर हत्या, भ्रष्टाचार, दुराचार से व्यथित कवि नीरव साही फरमाते हैं कि हवा में ही जहर घुला हो तो इलाज क्या करेगा | फिर हमदर्द के मिजाज के बारे में पूछने पर भला क्या उत्तर होगा | नेता जहाँ धनवान हो, जनता फटेहाल, उस देश को भगवान् ही बचाएँ |

अस्मुरारीनंदन मिश्र की कविताओं से पता चलता है कि कवि ने यह परिपक्वता और समझ अपने आत्मसंघर्ष, अघ्यवसाय और जिजीविषा के द्वारा प्राप्त किया है | मौसम का पहला आम हमारे इस अस्संग समय में शुष्क औए एकांगी होती जा रही रसानुमूति के दौर में एक रसज्ञ के पहले की कविता है | यहाँ बेमौसम टपके आम की संभावित मिठास की उम्मीद है, जो सुगवा और स्वाद की अंतर्क्रिया से पैदा हो रही है :

"मेरे सामने मौसम का पहला आम है/और मेरे सामने है/रस और परिपक्वता को/पहले-पहले पहचान लेनेवाले/किसी अज्ञात की सुदृष्टि/मैं उठाता हूँ उस डान को" |

(समावर्तन,मार्च २०१८,पृ.20)

अन्य कविताएँ हैं 'कलाकृतियाँ' 'चौथा प्रेम' 'कवि जी' 'वे जब भी हमें देशद्रोही कहते हैं' 'पत्थर' 'अकेले तो मौत तक नहीं आती' और 'एकल कुछ नहीं होता' | अकेला तो हर कोई है पर समय परिस्थिति, मौसम उसे अकेला रहने कहाँ देते हैं ? उसके मरने के कई कारण एक साथ उभरने लगते हैं | पहले मरती है उसकी उम्मीद | फिर मरते हैं उसके बैल | उसके पहले मर जाती है फसलें, जिससे उठ जाता है मौसम पर से विशवास | मरने के साथ साथ वह साफ़-साफ़ देखता है मरे हुए नारे, साँस उखड़ी योजनाएं | सूखकर अकड़ी संवेदनाएँ | आखिर मरते-मरते वह अपने मरने के कारण जान जाता है | नेताओं की नाकामी, मूर्खता, निर्लज्जता परन्तु सत्ता के प्रभाव के कारण सर्वत्र आवभगत देखते ही बनती है | नेता जी के अधोवायु-निष्कासन पर कवि का व्यंग्य बड़ा धारदार है, साथ ही प्रजातंत्र की शल्यक्रिया भी है : "अहादेवता धन्य हुए हम/तब अपां वायु से/ निश्चय ही अब खिल जाएंगे | सब नूतन आयु से" | (पृ.23)

सब कोई जो जवानी पार कर चुके हैं, पता नहीं क्यों बच्चा बनना चाहते हैं | वह हेनरी वॉन की कविता 'रिट्रीट' हो या सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता 'मेरा बच्चपन' या फिर दुर्गा प्रसाद झाला की 'मुझे बच्चा बना देना' और मैं खोज में हूँ' |

सर्वत्र एक भाव व्यापता है | मनुष्य को शायद चिंता और लज्जा है कि बच्चे तो परी की पीठ पर सवार हो असीम यात्रा पर निकल सकते

हैं | उसकी आवभगत में खड़े हैं सारे देवदूत- "सारे देवदूत अपनी-अपनी पलकें उसके रास्ते पर बिछा देते हैं" |

(समावर्तन,मार्च २०१८, मुझे बच्चा बना दो न, पृ.26)

उस अजनबी की याद कितना व्याकुल, तनहा बना देती है | उसकी छुअन में भला कौन-सा-जादू है | कुछ है कि शब्दों का रेशमी जाल बोदा हुआ जाता है | फिर भी उस नाज़ुक छुअन की याद बनी रहती है साँस-साँस में फाँस चूमती है रोजलीन |

(समावर्तन,मार्च २०१८,पृ.17)

अशोक गीते के दो गीतों (उम्र कैलेंडर, फैला है ज़हर) में आधुनिक युग की भागदौड़ चिल्ल पों क्षिप्रता का मार्मिक वर्णन है | पावों में बिवाई, डगर-डगर पर शूल से चुभनवाले काँटे, धुन्धभरा दिन उद्देश्य हीन, व्यर्थ, बेमतलब | आखिर आदमी करे तो क्या करे, जाए तो कहाँ जाए ? इस शहर ने रुकना भला कहाँ सीखा है | नतीजा सामने है :

"दौड़ी गाड़ी गूंजे आवाज़ें/कोई घायल बिखरा खून/म्हणत करते नहीं दौड़ते/खिन चढ़ा है जूनून" |

(फैला है जहर, पृ.27)

कृष्णा बैनर्जी 'मेरी माँ' की याद में अतीत से वर्तमान को मिलाकर देखती है | उसका 'स्व', अस्तित्व, अस्मिता उसी की देन है, इसे भला वह कभी भूल सकती है क्या ? एक-एक घटना, दृश्य उसके समक्ष सिनेमा की रील तरह घूमता जाता है और वह अतीत-वर्तमान की संधि रेखा पर खड़ी सोच रही है :

"चोट लगने ना देती/पीड़ा अपने ऊपर ले लेती/अपने आँचल में मुझे समा लेती/तुम्हारा आँचल खुशियों का/तुम्हारा सलोना रूप-देवी दुर्गा का" | (पृ.52)

अभिलाषा भट्टाचार्य तो माँ से आज भी लगता है नाभि-नाल जुदा हुआ है | इससे उसे सुकून, सहारा और सुरक्षा का बोध होता है :

"तुम्हारे वृक्ष में सिमटा/आज भी/उसी तरल संसार में/सुकून पाटा हूँ" | (समावर्तन,अप्रैल २०१८)

भारत सरकार उपांत की आबादी हित योजनाएं कई बनाती है | मसलन निश्शुल्क शिक्षा, विद्यालय में दोपहर का भोजन मुफ्त | फिर क्या है | उपस्थिति शत-प्रतिशत हाजिरी लगाने तक | फिर तीन चौथाई बच्चे भाग खड़े हुए अपने घर के काम में | मसलन, लकड़ी जलावन के अन्य सामान इकठ्ठा करना, बकरी चराना | फिर भोजन के समय भागकर भोजन करना | प्रो० मृत्युंजय उपाध्याय की दो कविताएँ इसपर आधारित हैं- 'पढ़ाई-लिखाई' और 'देश का भविष्य' | पहली कविता का प्रारंभिक अंश देखा जाए- "सुगिया बोढनी दौड़ भागकर लगाती है, हाजिरी/मिड दे मील के लोभ में/फिर खेत-खेत भटकती हैं/जलावन जुटाती है/पर खाना खाना कभी नहीं भूलती हैं" | दूसरी कविता में ऊंघ रहा है शिक्षक टूटी कुर्सी पर बैठा | बच्चे रट रहे है पहाड़ | अकचकाकर देखता है पहले कुर्सी के पाए | फिर फटकारता है छड़ी बच्चों पर | यही हो रही है सबके लिए शिक्षा और भारत का प्रजातंत्र पाल पोसकर बड़ा किया जा रहा है | लगभग सभी सहकर्मी का वही खैया है | तब इस डूबती नैया का भगवान् ही खेवैया है |

अनुराधा प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित इन काव्य-संकलनों पर भी विचार किया जा सकता है | काव्य कलश साझा काव्य संग्रह,

प्रधान संपादक, मनमोहन शर्मा शरण, राहगीर: अक्षय कुमार सिंह, मेरे ख्व्वाबों का शहर: आर० के० सिन्हा, तिनका एक सफरनामा: संजीव दीक्षित: बेकल मुझे कुछ कहना है: देवेन्द्र कुमार मिश्र, मरीज़ ए मुहब्बत (ग़ज़ल संग्रह): मदनमोहन शुक्ला, पीहू पुकार: रवीन्द्र जुगरान, तन दोहामन मुक्तिका: विश्वंभरनाथ शुक्ल, अंतर्मन: अर्चना भारद्वाज, आनंद सागर: निशिबंसल, आवाज़-ए-दिल (ग़ज़ल संग्रह): मदन मोहन शुक्ला, इश्क ए जाविदानी (ग़ज़ल संग्रह): मदन मोहन शुक्ला, अपरिचित राहें: हिमांशु अधिकारी, अधूरे एहसास: श्रेया आनंद, उम्र जैसे नदी हो गयी: विश्वंभर शुक्ल | 'उत्कर्ष मेल': संपादक मदन मोहन शर्मा नई दिल्ली, में ये विवरण उपलब्ध हैं | इस पत्रिका में प्रकाशित कुछ कविताओं पर टिपण्णी हो जाए | डॉ.सुधीर सिंह, अवकाशप्राप्त इंसान की व्यथा कथा सुनाते हैं की किस प्रकार विकास की मुख्य धारा से उन्हें अलग क्र दिया गया है | फलत: अकेलापन, बेगानापन उन्हें यदा-कदा घेर लेता है | तब जीवन भार, व्यर्थ लगने लगता है | वैसा बेतुका व्यवहार भी होने लगता है :

दिल से प्यार करता सभी रिश्तेदारों को |

कभी बेमतलब ही डांट देता किसी को ||

(उत्कर्ष मेल, १६ जून-३१ जुलाई, पृ.7)

ग़ज़ल के उत्स, सृजन के किरणों पर डॉ. संजीव दीक्षित की पंक्तियाँ सार्थक हैं | बस इश्कहकीकी और इश्कमजाजी का आलम है :

करता हूँ तुझे याद तो ग़ज़ल बनती है |

होता हूँ जब मैं बर्बाद तो ग़ज़ल बनती है ||

प्रो० मदनमोहन शुक्ल किसी की याद में खोए हैं | बेइंतिहा चाहते हैं उसे | प्रकृति से उपमान जुटाकर कैसा समां बाँध देते हैं :

उमड़ घुमड़कर बादल भी दे रहे हैं पैगाम |

आज किसी के होने में, सहरन है रुसवाई ||

नीरज त्यागी को सर्वत्र उनकी प्रेयसी ही दिखाई देती है : "तुम अंधेरों में उजाले की उस किरण सी हो, जो पड़ जाए जहाँ, वहां फ़ैल जाए उजाला" |

डॉ.श्याम सिंह शशि ने 'रोमा पुत्री के नाम' उपन्यास में कई जगह कविताओं का प्रयोग किया है | ये कविताएँ उपन्यासानुरूप वातावरण, घटना, परिवेश को उजागर करती हैं तो पात्र की मनोदशा में भावन भी करती हैं :

दुनिया की यह रीति है | डू गुड एंड फारगेट.....

(पृ.30)

विदा की वेला का मनोभाव कितना कारुणिक हो जाता है | शायद फिर मिलें या न मिलें | कवी को अपने प्रयत्न, संघर्ष, जद्धोजहद में पूरा विशवास है | लोगों को प्यार लुटानेवाला सदा प्यार पाता है :

"इतिहास के अक्षर हमें/सत्कार देंगे सब जगह/हम प्यार लेते बांटते/अलमस्त से चलते रहे" |

(पृ.32)

सधे हाथों की थाप: त्रिलोक मोहन पुरोहित का कवि किसी वाद-विवाद, जंजाल में नहीं फंसता | कवि की दृष्टि अन्धकार में चक्कर नहीं लगाती बल्कि वह कविता में प्रकाश को इस तरह से स्थापित

करता है की पाठक आश्चर्यचकित हो जाता है | इसका कवि मनुष्य जीवन के संकटों सामाजिक, सांस्कृतिक, अंतर्संबंधों की पड़ताल करते हुए वर्तमान संबंधों को नवीन युगीन यथार्त बोध के साथ अभिव्यक्त करता है |

जिंदा हूँ मरने के बाद: रेवती रमण शर्मा में बताया गया है की सृष्टि का सब जड़, चेतन मृत्यु-धर्मा है | आज या कल सबकी मृत्यु निश्चित है | परन्तु एक सर्वांत जाग्रत, सचेत कवि यह कहता है की 'ज़िंदा हूँ मरने के बाद' तो वास्तु सत्य को जानने की आकांक्षा स्वाभाविक है | तात्पर्य यह व्यक्त करना है की समय, समाज, तंत्र और देश की स्थितियां अत्यंत मारक हैं | कई लोग कई कारणों से आत्महत्याएं कर रहे हैं | अकारण मर रहे हैं | पूँजी, धर्म, अघ्यात्म तंत्र से जुड़े हैं | उससे लाभ उठा रहे हैं | जो जीवित हैं, वे भी मरे के समान ही हैं |

अभिनव संबोधन: मधुसूदन पांड्या के जुलाई-सितम्बर २०१८ अंक में हबीब कैफ़ी की दो ग़ज़लें हैं | नींव की ईंट का नामलेवा कोई नहीं होता भले ही वह सात हाथ गहराई में पूरी इमारत का बोझ संभाले अँधेरे में घुट रही हो |

"तुम्हारे महल की बुनियाद में दफ़न/मगर कोई भी महल में लेता हमारा नाम नहीं"| दोस्ती के नाम पर दुश्मनी कैसा-कैसा खेल खेलती है, यह उनकी दूसरी ग़ज़ल से पता चलता है:

आएगा मुझसे दोस्ती करने,

जब वो नाखून तेज़ कर लेगा |

भावों की गहराई, किसी को महत्व देने का जज्बा यहाँ देखा जा सकता है: "जब तुम आओं/नहलाएँ तुम्हें स्वाति बूँदें/महकाएँ तुम्हें शमीमी पवन/मेरे संग निहारे तम्हारे, गगन | मधुमती,(उदयपुर, जुलाई-अगस्त २०१८) के मुख्य पृष्ठ पर बालकवि बैरागी की 'हिंदी अपने घर की रानी' हिंदी के महत्व, उसकी सर्व-व्यापकता, सार्वजनीनता पर बेबाक उदगार है: "भूख नहीं है इसे राज की/प्यास नहीं है इसे ताज की/करती आठों पहर तपस्या/रचना करती नव समाज की" |

अंत में सुरेन्द्र सिंह राव 'मृत्युंजय' के दोहे (हिंदी को समर्पित दोहे) भी हिंदी की महत्ता का परचम लहराते है:

जितनी भाषा जगत में, हिंदी उन सब तह |

वैज्ञानिक अरु सरल है, जन प्रबुद्ध मन तह ||

ये कविता-संग्रह भी उल्लेखनीय हैं | यों स्थान सीमा के कारण सबके उदाहरण आदि देना संभव नहीं है | घिस्सी चप्पल की कील: भारतरतन भागवे, साजिश के चलते : सदाशिव कौतुक, रिश्तों की बूँदें : सुदर्शन व्यास, मेरा गाँव की सुबह : नर्मदा प्रसाद कोरी, मनके मौसम : राधारानी चौहान 'मानवी' आदि पर चर्चा अपेक्षित है |

सोनी पाण्डेय की कविताएँ स्त्री विमर्श की कवितायेँ हैं |इसके दो पक्ष हैं | पहला पक्ष थोडा तल्ख़ और हिम्मती है जबकि दूसरा भारतीय स्त्री की परम्परा विवशता, बेचैनी और उदासी को प्रकाशित्क्रता है | मुक्ति की आकांक्षा यहाँ भी है परन्तु उसका स्वर थोड़ा मंद है | इससे उसका महत्व कतई कम नहीं होता | सोनी पाण्डेय दुसरे पक्ष की हिमायती है | वः भारतीय समाज की स्त्री की वास्तविक स्थिति और मुक्ति की आकांक्षा के साथ व्यवहारिक अनुभव को नज़रंदाज़ नहीं कर

पाती | अत: वः किसी अति के पक्ष में न जाकर एक स्वाभाविक परिवर्तन की आकांक्षा है | 'तीसरी बेटी का हलफनामा' में उनका स्वर अन्य कविताओं की अपेक्षा तल्ख़ है | यहाँ परिवार की इस बेटी को उपेक्षित मान लिया गया है | लगभग अमावस की तरह | वः अपने पिता से तीखे, ज्वलंत प्रश्न पूछती है | कविता में उसके आत्मविश्वास का उजास परम्परागत अँधेरे को चीरकर अपने लिए एक स्पेस की मान करता है :

"सुनिए बाबूजी/मेरे अंदर जो दहकता हुआ बहता है/गर्म लावा/वो मेरी उपेक्षा का दंश/और बेटियों की प्रतिभा का/दमघोंटू सन्नाटा है/जहाँ जलता है भभककर/ सभ्यता का उत्कर्ष/उसका स्वाभाविक जोर लडकी के सपनों पर है, जिसे न देखने और न साकार करने का अवसर दिया जाता है | लड़की को लेकर परिवार में प्रचलित धारणाएँ उनके कथित चाल चलन के पैरामीटर्स को लेकर सोनी चिंतित है | इन बाह्य अवरोधों दबावों के बावजूद उनका बलाघात लड़की के स्वप्नों पर है | इसी तरह सोचकर वः स्त्री-मुक्ति के मर्म तक पहुँचती है" |

"सबसे बड़ा पहरा/हमारे स्वप्नों पर है | और मेरे प्रिय कवि पाश कहते है | सबसे बुरा है/हमारे सपनों का मर जाना" |

(समावर्तन,सितम्बर,२०१८, पृ.19)

कहा गया है की दर्द का बेहद से गुज़रना उसका इलाज हो जाता है | परन्तु इससे बेहतर है उससे दोस्ती कर ली जाए | तद्रूपता, तादात्म्य की सीमा तक :

"इसलिए दर्द से दोस्ती है मेरी/अब दर्द की डोर थामें/घूम आती हूँ, दर्द के हिमालय तक" |

(प्रेम:समावर्तन,सितम्बर २०१८,पृ.122)

तुम्हारे जाने के बाद कृष्णकांत निलोमे की दुःख की जड़ से उपजी कविताएँ हैं | इसका पोषण हुआ है, विषाद की गोद में | कवि की अपनी पत्नी के बारे में अपूर्व कल्पना है | विराट, उदार, मर्मस्पर्शी: "वः पहले रूप थी/आकार थी/शैन: शैन: वः विचार की तरह/आत्मस्थ होने लगी" |

पत्नी का विचार के रूप में आत्मस्थ हो जाने का यह बिम्ब सर्वथा नया है और विचार ऐसी संज्ञा होता है, जो कभी शून्य में विलीन नहीं होता |

शब्दों के परे: त्रिलोक महावर में अपने आस-पास, मनुष्यों और प्रकृति को समझने की अद्भुत क्षमता है | अनुभव विचार का रूप ग्रहण कर ले, इसकी यह प्रतीक्षा एक हद तक करते हैं | भाषा के आडंबर की अपेक्षा भाव की सघनता इनकी कविताओं की विशेषता है | शब्दों से परे की कविताएँ हमे आश्वस्त करती है कि कवि के पास पर्याप्त अवकाश और स्पेस है | जीवन को समग्रता में जानने वाला कवि हड़बड़ी में नहीं होता |

इधर जो हमारी नागर सभ्यता विकसित हो रही है, वः टेक्नोलोजी और अधुनातन विज्ञान से भले ही संपन्न हो लेकिन उसने हमें गांवों, पहाड़ों, वनों से निर्ममता से काट दिया है | भलें ही इसे हम आंकें उपलब्धियों के तौर पर परन्तु कवि को हर पल अपने मूल से अलग होने का दर्द होता है :

"कदम के पेड़ के नीचे नारियल के दरख्त पर/सूरज सुस्ताता था/शाम को घर लौटने के पहले/वहां अब है कंक्रीट का जंगल/ट्यूब्लाईट की जगह सोडियम वेंपरलैंप ने ले ली है" |

पुनीता जैन की तीन कविताएँ हैं, जो अमूर्त भावात्मक हैं पर हैं प्रभावोत्पादक | "वायु में जो रहती है वायु-सी/उसी लिपि में उसने लिख दिया मौन" | सपनों के दौर में सैर कराते हैं वेद हिमांशु | जो स्वप्न लिपिहीन, रूपहीन, शब्दहीन है, बिलकुल खामोश हैं, उसे वह नींद के समान मानते हैं | आदमी सोचता है नदी के बारे में फिर उदास सपनों में खो जाता है | स्वप्न ख़ुदकुशी भी करते हैं, थ भाव है 'ख़ुदकुशी करते स्वप्न' का | सपने गोपनीयता, सनसनी पैदा नहीं कर सकते, उनकी ज़िन्दगी मर जाती है और स्वप्न भी ख़ुदकुशी कर लेते हैं | बाईस वसंत पार कर चुकी लड़की स्मृतियों की जुगाली भले कर ले यह जानते हुए कि अब सारे स्वप्न अर्थहीन हैं |

'मनमीत मेरी' राम मिलन प्रसाद की कविता है, जिसमें कवि अपने मनमीत के नाना गुणों, प्रसंगों की भावुकतापूर्ण अभिव्यक्ति करता है | वह सुख-दुःख के ताने-बाने बुनती रहती है | कभी अनसुलझी अबूझ पहेली-सी लगती है | परन्तु कवि इस बात से निराश, उदास हो जाता है | पता नहीं वह कब इसका हाथ छुडा चली जाए नेपथ्य में | डॉ. प्रेम बाजपायी अपने गाँव की नाना विशेषताओं का बखान करते हैं | यों वह रहते हैं-कोलाहभरे शहर में | परन्तु गाँव उनके समक्ष सदा घूमता रहता है | वहां प्रकृति, प्रेम, खुलेपन का सौन्दर्य देखते ही बनता है | एक नदी को कितनी व्याकुलता रहती है सागर से मिलने की जैसे अल्हड़ युवती दौड़े, प्रिय को गले लगाने को | वहां श्रांत, क्लांत मन, विराम पाता है | मिटटी की खुशबू उसके मन में बसी है | वहां प्रेम की धारा कलकल निरंतर बहती रहती है |

(नबनिकष, कानपुर,जन-मार्च,२०१८)

वैसे रोहिताक्व अस्थाना ग़ज़ल के पंडित हैं | परन्तु उनके प्रीती के दोहे सहज ही ध्यानाकर्षण करते हैं | अलग-अलग दोहों में प्रीति के नए-नए रंग हैं तो नायिका के सहस्र गोनों का खुलकर बखान हैं :

चन्दन जैसा रंग तब,सघन केश की छाँव |

कृश काया कमनीय बहू, हल्दी जैसे पाँव ||

संतिश कुमार झा की दो कवितायेँ प्रभावक हैं 'कितना मुश्किल होता है' और किस्से कहूँ वेदना' | कोई आया प्रेमी, प्रेम के रंग बिखेर गया | रग-रग प्रेम में समा गया | फिर वह चला गया, तो इसे सहना कितना मुश्किल हो जाता है | कवि धर्मसंकट में पड़ जाता है | अपनी वेदना कहे तो किस्से कहे | कौन सुनेगा उसके आंतरिक अवसाद, दुःख को | कोई आया, प्रेम के तराने से मन प्राणों को मिंगो गया, फिर चला गया | उसे रोका न जा सका :

"हिय में विदाई की अगन, है अश्रुपूरित थे नयन, मन क्यों न चाहे रोकना किस्से कहूँ मैं वेदना" |

(संकल्य, हैदराबाद, जन-मार्च २०१८)

इस अंक 'संकल्य' 'में पर्यावरण संरक्षण' पर प्रो० सी० बी० श्रीवास्तव 'विदग्ध' के दोहे बड़े भावपूर्ण और प्रासंगिक हैं | उत्तरोत्तर बढ़ती आबादी के कारण जंगल, वृक्ष, पहाड़, तालाब का दृश्य से लिप्त होते जाना बहुत बड़ा संकट है | भूकंप, बाढ़, सूखा, प्रलय प्रकृति की उपेक्षा के कारण है | नियमों, कानूनों को टाक पर रखकर खुलेआम हो रहा है प्रकृति का शोषण | परिणाम समक्ष है- बाढ, सुखाड़, भूंकप, अतिवृष्टि, अनावृष्टि | फलत: मानव पर टूट गया विपत्ति का पहाड़ है | विश्वकल्याण के लिए विज्ञान का मत है, "विश्व के कल्याणहित

विज्ञान का है एक मत, आत्मसंयम, प्रकृति पूजन, प्रकृति प्रति आभार है" |

(संकल्य, जनवरी-मार्च २०१८, पृ.22)

मुहम्मद कुरैशी 'निर्मल' गजलों के माध्यम से बूढ़े, बुज़र्गों की व्यथा का बयान करते हैं | यों उनके घर में नहीं है कोई कमी | परन्तु उनकी माँ ले रही है उधार | बेटा बन गया है भले ही मंडलाधिकारी परपिता की विवशता तो यथावत है :

बेटा बने है मंडलाधिकारी

पर बापू को लाचार देखा |

मत्स्येन्द्र शुक्ल को आदिम जन जाति की चिंता रही है | भारत का इतना विकास हो गया | संचार माध्यम इसका प्रचार करते नहीं अधाता है फिर भ उनके विकास पर सर्वत्र प्रश्नों की तलवार तनी है :

वन-प्रांत की असम खुरदुरी ज़मीन पर/छतरीनुमा पात पत्ती समय काट रहे आदिम जन/खनिज गुफाओं में भूखे भेडियों का जंग पशुतुल्य हो चुका है मनुष्य का जीवन |

(देश के नागरिक सोंचे, संकल्य, जन-मार्च,२०१८, पृ.27)

सत्या सिंह को इसी की चिंता है कि अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए लोग किस प्रकार दंगे करवाते है |

(सरसीछंद, संकल्य, जन-मार्च २०१८, पृ.28)

नारी विमर्श, वृद्धविमर्श का आन्दोलन उत्कर्ष पर है | परन्तु उनकी दयनीयता, विवशता पर अंकुश कहाँ लग पाया है | जब तक भार सहेंगे देखो बाबूजी के कंधे : योगेन्द्र प्रताप मौर्य पठनीय और

विचारणीय है | रमेश मनोहरा अपनी गजलों में कई शाश्वत और ज्वलंत समस्याओं पर प्रकाश डालते हैं | कुछ लोग कभी सकारात्मक दिशा में सोंचते ही नही हैं | नकार उनका है मुख्य स्वर | जो यात्रा नकार से प्रारम्भ होगी, वह भला कभी साकार तक पहुँच सकती है ?

"पूछ उनसे कैसे भी सबल सवाली बनकर/मगर उनके पास नकारात्मक जवाब होते हैं" | गुंडों, लफंगों बदमाशों की खूब चलती है | कारण, नियम, क़ानून को धता बताना उनके लिए एकदम आसान है | शासन, व्यवस्था उनका कुछ बिगाड़ नहीं पाती :

क़ानून भी उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता है

गुंडे जब खुद ही क़ानून की किताब होते हैं

'नेह की चंचल नदी' में मंजु श्रीवास्तव का उदगार है कि प्रेम, सौहार्द्र अपनत्व जहाँ है, वहां किसी प्रकार का मनोमालिन्य, विकार, भेद का निषेध है | यह नदी किनारा छोड़कर अलग-थलग बहने लगती है | कारण, इसके सीने में खर, पतवार उग आते हैं |

मोहनी पाण्डेय 'आखिर क्यूँ ?' में चिंतित और व्याकुल इसलिए हैं कि चारों ओर महाभारत छिडा है | अर्जुन बढे तो आखिर बढे कैसे | उनका पथ शकुनि, दु:शासन अवरुद्ध कर देता है | घृणा, महत्वाकांक्षी, अनीति से विजय-लालसा का भाव जब तक छाया रहेगा, सत्य, विवेक हारता ही रहेगा | कवयित्री का मारक प्रश्न है- "कब बुझेगी ये मृगतृष्णा की प्यास ? / कब तक सुलगेगी ये घृणा की आग ? "झूठे, अहंकार, महत्वाकांक्षा, सत्ता की लालसा मनुष्य को भरमाते रहेंगे और वह उसके पीछे बंदर-सा नाचता रहेगा | उसके हाथ निराशा, हताशा, पराजय के सिवा कुछ नहीं आएगी |

दोहा संगम (संपादक, डॉ.विपिन पाण्डेय, गिरधारी सिंह गहलोत) इलाहाबाद से प्रकाशित १० दोहाकारों का संकलन है | इसमें झारखंड, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तराखंड, उत्तरप्रदेश और महाराष्ट्र के चर्चित कवियों के १००-१०० दोहे और हर कवि का सचित्र परिचय प्रकाशित किया गया है | इन दोहों का प्रतिपाध्य है- वर्तमान जीवन की त्रासदी, दुर्व्यवस्था, खेत-खलिहान, मजदूर की दशा-दुर्दशा, अपराध, भ्रष्टाचार, हिंसा, अशिक्षा, भ्रून्हात्य आदि | बड़ी बात यह है कि दोहे के छंद-विधान का विधिवत वर्णन है | संख्या के आधार पर दोहों के २३ प्रकार निर्धारित किये गये हैं | रहीम ने इसकी विशेषताओं का दो पंक्तियों के एक दोहे में सटीक वर्णन किया है | कितना सरल, कितना अर्थवान :

दोहा दीरध अरथ के, आँखर थोरे आन्हि |

ज्यों रहीम नटकुंडली, सिमटी कूदि चलि जांहि ||

(हिंदी प्रचारक पत्रिका, जुलाई २०१८, पृ.12)

विश्वनाथ प्रसाद की कविता १९४०-४१ में छपी थी 'माँ' पर | प्रारंभिक पंक्तियाँ थी :

सब देवदेवियाँ एक ओर,

ऐ माँ मेरी तू एक ओर |

माता को देव देवियों से महान माना गया था | यहाँ डॉ. रामवृक्ष की कविता है 'माँ' जिसमें माँ के सारे दर्द, दुःख, विवशता, पराधीनता एक साथ मूर्त हो उठे हैं | अंतिम पंक्तियाँ कहने के लिए आत्मा विवश कर देती है :

बच्चे खूब सयाने होकर माँ को सीख सिखाते हैं |

कोड़ी के मुहताज रहे जो लाखों लाल कमाते हैं |

बड़े हुए इतने अब माँ को माँ कहते शरमाते हैं |

गाँव-गाँव अपने बच्चों के गुण ही लेकिन गाती माँ |

इतना सब करती है, लेकिन बदले में क्या पाती माँ |

(चक्रवाक, नई दिल्ली, अप्रैल-जून २०१८, पृ.76)

कैसी विडंबना है | नियति का कैसा मजाक है कि सबका बोझ उठानेवाली माँ स्वयम बोझ कहलाने लगती है | बहुओं की कतरन से काम चले या जामाता की फटकार मिले, वह रहती सदा संतुष्ट | संतान हित समर्पित | प्रभू से उनके योगक्षेम की अहर्निश प्रार्थना करते हुए | माँ के त्याग विराटता का यह कैसा आख्यान है |

सुरीति रघुनन्दन की कविता है 'प्रेम' (भाषा, जुलाई-अगस्त २०१८) | इसमें आधुनिक युग की वैज्ञानिक पद्धति द्वारा प्रेम प्रस्ताव देना, स्वीकृति मिलना, विबाह फिर मधुयामिनी आदि का जीवंत वर्णन है | कहना नहीं होगा कि प्रेम पर वैज्ञानिकता का कितना व्यापक प्रभाव पडा है | नकारात्मक पर विचार किया जाए, तो यही पक्ष प्रबल है | प्रेम, मधुयामिनी आदि का सीधे व्यावसायीकरण हो गया है :

"कमाल का हुनर है आज की पीढ़ी में/भावनाओं का व्यावसायीकरण हो गया/प्रेम तो दिल के गुब्बारे के रूप में/नित नए प्रारूप में शो-केस में रखा/दुकानों की शोभा बढ़ा रहा है" |

(भाषा, जुलाई-अगस्त २०१८, पृ.174)

स्मार्ट फोन ने हिंदी की ही नहीं, अंग्रेज़ी की भी दुर्गति कर दी है | पारस्परिक वार्तालाप शून्य की कगार पर आ गया है | मोबाइल बना है मध्यस्थ |ऐसा प्रतीत हो रहा है कि एक दिन मानव बोलना ही भूल जाए | यह बाजारवाद, भूमंडलीकरण का प्रभाव है |

'मुड़िया पहाड़' मारीशस के पल पल के इतिहास का साक्षी रहा है | उसने देखा है इस देश के शरीर क यातना भोगते, पीड़ा सहते और कोड़ों की मार खाते | उसे खून के आँसू बहाते देखा है | इस पहाड़ ने यहाँ के लोगों को अपने आत्मबल,देशप्रेम, स्वाभिमान के लिए पलपल संघर्ष करते देखा है | दिनकर ने हिमालय से युग के ज्वलंत प्रशन पूछे थे | हिमालय ने उत्तर भले ही नहीं दिया हो पर उसका मौन बहुत कुछ कह गया था | इसी प्रकार यहाँ मुडिया पहाड़ को सारा दुःख दर्द सुनाया जाता है और उसका मौन उत्तर मानो सारी समस्याओं का समाधान देता है :

"धड़कता रहा हूँ, हर ख़ुशी में/सहमत रहा हूँ हर दर्द में/पिघला हूँ पल-पल के आघातों से/धधता हूँ जुल्म के आघातों से/हाँ मैं मुड़िया पहाड़" |

(भाषा, जुलाई-अगस्त २०१७, पृ.176)

वह देश की हर ख़ुशी, उपलब्धि, जय-पराजय से संबंध रखता है, जिसकी जीवंत अभिव्यक्ति इस कविता की मूल चेतना है |

भागलपुर से प्रकाशित 'सुस्न्भाव्य' (संपादक दयानंद जायसवाल)में कई कविताएँ, ग़ज़ल है | उनकी चर्चा वांछनीय है | अशोक मिजाज, अमरेश सिंह भरोदिया, उत्कर्ष अग्निहोत्री की गजलों पर संक्षिप्त टिप्पणी है यह | मिजाज कोई बनावट स्वीकार नहीं करता- "हम बनावट को तो स्वीकार नहीं कर सकते" | अमरेश ने सदियों से

नहीं देखि है हंसी अपने होठों पर | वह तो आंसुओं का उपहार ढो रहा है | वक्त की हिमायत के लिए सर झुकाकर उत्कर्ष ईमान गिराता है |

माँ की महानता विराटता का व्यापक वितान ताना है, डॉ. प्रतिमा माही ने 'वो तो माँ है मेरी' में | वह लाख दूर हो पर संतान के निकट रहती है सदा | कोई उसपर प्रहार करे, झट वह कवच बन जाती है | उसे लाख दर्द हो, संतान को इसका भान नहीं होने देती है | सदा मुस्कुराती रहती है :

कब कोई चोट आकर लगाता मुझे

हाथ उसका कवच बन बचाता मुझे

(नव निकष, कानपुर, सितम्बर २०१८, पृ.15)

वीरभद्र कार्की ढोली को चिंता है कि क्यों उसका गाँव शहर बन गया : "टुकड़े-टुकड़े खेतों पर सड़क बन गए/जोतने वाले मेहनतकश हाथ पत्थर तोड़ते, कोलतार बिछाने में व्यस्त हैं आजकल" |

(नव निकष,सितम्बर २०१८)

द्वीप लहरी (संपादक डॉ.व्यासमणि त्रिपाठी) पोर्टब्लेयर से नियमित प्रकाशित होती है | आठ दस कविताएँ हर अंक में रहती हैं | 'विश्वमय नववर्ष' में पारस्परिक प्रेम, मिलन अपनत्व की ऊष्मा है :

"विश्वभर में फैले एक आदर्श गले से गले/बिछड़े-पिछड़े भी मिले सहर्ष" |

जगदीश नारायण राय 'मानते या नहीं' में स्वीकारते हैं प्यार है | अपनत्व है / बिना इसे स्वीकार किए, जीवन में उतरे इसकी अनुभूति नहीं हो पाती है :

प्यार हीं प्यार है आंगने-आंगने |

प्यार को तुम मानते या नहीं ||

"ऐसी ही माँ है / आपकी जो माँ है / वही मेरी माँ है" : यह स्वीकार बिना प्रेम, सौहार्द्र विकसित नहीं हो पाते |

भाषा (मई-जून २०१८) में कुछ कविताएँ हैं, जो अर्थवान, प्रेरक और अनुभूतिसंपन्न हैं | ग्वालियर के प्रसिद्द कवि महेंद्र भटनागर कला को अपनी कविता में व्यख्याचित करते हैं | कविता आज के ज्वलंत प्रासंगिक प्रश्नों के उत्तर दे | कहीं अन्धकार नहीं हो | निराशा के बादल नहीं छाए रहें | व्यक्ति कहीं कराह नहीं रहे हों | सर्वत्र आशा, विशवास, पारस्परिकता की बंशी बजती रहे :

व्यक्त सिर्फ आज के सवाल चाहिए

तम नहीं प्रभात लाल लाल चाहिए

व्यक्ति की करुण कराह है उतारनी

आग जो दबी उसे पुन: उभारनी

सव कुरीतियाँ मिटें, प्रहार जलजला |

'स्व', अस्मिता, स्वाभिमान की आग निरंतर जलती रहे | इसी से होगा मानवता का कल्याण |

ए० कीर्तिवर्धन चाहते हैं मनुष्य का प्रकृति से तादात्म्य हो | प्रात: काल चिड़ियों का जागना, चहचहाना और खुले गगन में विचरण करना हमें प्रभावित नहीं कर पाया, तो हमारा जीवन मानव का जीवन नहीं है | एक स्थाणु (ठूँठ) भर है | यह कोई भावना,कोंपल नहीं फेंक सकता |

यह किसी क्रान्ति (जिहाद), आन्दोलन का कतई लक्षण नहीं है कि धर्म-परिवर्तन के नाम पर लोगों को डराना, धमकाना खून की होली खेलना | संप्रदायवाद के संकीर्ण दायरे में रहकर जाति-भाषा, मजहब के नाम पर दंगे करवाना और उस आग में अपने स्वार्थ की रोटी सेंकना | तारिक असलम तसनीक की यह जिहाद नहीं है-कविता इसी भाव को अभिव्यक्त करती है | मजहब बदलने से कुछ नहीं होगा-

"ज़रूरी है कि / उसकी प्रत्येक जायज़ बातें / सुनी जाएँ / जमीन से आसमान तक एक ही पगडंडी चुनी जाए" | (यह जिहाद नहीं है तस्नीम)

इसी अंक में भगवान वैद्य प्रखर की कविता है 'बोलो न पापा' जिसमें चिड़ियों के साथ घुलने-मिलने, उनके समान स्वछंद, उन्मुक्त विचरण करने का भाव है :

"बागवानी के समय वह आपको ऐसे निहारती / जैसे उसकी अपनी बगिया में काम करनेवाले माली हों आप" | (पृ.216)

पक्षियों की तदाकारिता की सुंदर व्यंजना है यहाँ |

प्रसिद्द व्यंग्यकार यज्ञदत्त शर्मा के परलोक गमन पर उनकी कुछ कविताएँ 'व्यंग्य यात्रा' (जुलाई-सितम्बर) में आई हैं- 'बेटे के लिए' , 'चींटी काटती है' , 'धुप बहुत खुश हुई' , 'अनाया के लिए' , 'पेड़ 1,2,3,4,5,6,7' | बेटे के रूप-सौन्दर्य का वर्णन कितना सरल, सहज और मनभावक है :

"गोल-गोल छोकरा है / फलों का टोकरा है / गालों में सेब है / होठों में गुलाब" |

(पृ.5)

अपनी बच्ची की ख़ुशी का प्रकृति के साथ तादात्मय कितना मनिभावन है :

"एक दिन / मेरी बच्ची / अचानक खिलखिला पड़ी / उसके पास धूप आकर हो गयी खड़ी" |

(उपरिवत, पृ.15)

प्रकृति के प्रति यज्ञदत्त शर्मा का कैसा लगाव है, उसका सौन्दर्य उन्हें कितना भाता है, यह इन पंक्तियों से पता चलता है :

"जब जब पेड़ / सौन्दर्य प्रतियोगिता में / भाग लेता है | लडकियां हड़ताल कर देतीं हैं" |

(व्यंग्य यात्रा, जुलाई-सितम्बर २०१८, पृ.16)

सत्या सिंह घूस और बेईमानी की कमाई पर कितना मारक व्यंग्याघात करती है : "कर लो काली लाख कमाई / कर लो लाख फरेब / अंत समय सब रह जाना है / नहीं कफ़न में जेब" |

(संकल्य, जनवरी-मार्च २०१८, पृ.26)

क़ानून के चिकने मुहावरों, शब्दों को हवा में उड़ाकर एक दिन आदिम जन उठेंगे, तब देश के नागरिक ज़रा सोच लें क्या होगा तब संसद का हाल ?

इसी अंक में वीरेन्द्र सिंह विद्रोही का व्यंग्य बड़ा मारक बन पड़ा है, जो भोथरी चमड़ी को छेद दें और पत्थर दिल को सोचने के लिए विवश करें : "निजाम धृितराष्ट्र सत्ता में बैठे / फिर क्यों न फिरें दुर्योधन ऐंठे" |

(संकल्य, जनवरी-मार्च २०१८,पृ.24)

सूर्य प्रकाश मिश्र जिद में अपने बच्चपन की ओर लौट चलते हैं और तब तक के जिद का बड़ा व्यापक वितान तानते है "अपनी चर्खी में धागे भराने की जिद / आसमां में पतंगे उड़ाने की जिद / छोटे हाथों में भारी-सी चर्खी लिए / ठान लेना सभी को हारने की जिद" |

(नवनिकष, मई २०१८, पृ.43)

आज पर्यावरण, धरती, जीवजंतु क्या मनुष्य के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिन्ह लग गया है | कारण, धरती उसके वृक्षों जीव-जंतुओं, तालाबों का दिन-प्रतिदिन शोषण, क्षरण हो रहा है तो भला मानव का अस्तित्व कभी सुरक्षित रहेगा ?

प्रजातंत्र की परिभाषा है जनता का, जनता द्वारा जनता के लिए शासन | परन्तु इसकी गिरती हालत, मतदाताओं, विधायकों, सांसदों की खरीद-फरोख्त को ध्यान में रखकर प्रो० जुराज ने इसकी परिभाषा इस प्रकार दी हैं : Government of the cattle by the cattle and for the cattle- मवेशी का, मवेशी द्वारा, मवेशियों पर शासन | इसी तथ्य को थोड़ी शिष्टि भाषा में सुरभी सुरेन्द्रन 'शतरंज' कविता में व्यक्त करते हैं :

"यह पहले था राजाओं का खेल / हो गया अब नेताओं का खेल" | ये लोग जनता को आपस में लड़ाकर तंत्र का मजा लेते हैं- "इस खेल में धर्म रहा दलाल / पूँजी रहा खजांची / नारी रहा मसाला / सत्ता पर कब्ज़ा रखने के लिए दल बदल की नीति" |

(नवनिकष, फरवरी २०१८, पृ.69)

शौकत इकबाल साहब का जगप्रसिद्ध तराना है "सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा / हम बुलबुले हैं इसके, यह गुलसिताँ हमारा" |

उन्होंने ही प्रजातंत्र की दयनीयता पर टिप्पणी करते हुए कहा था- "यहाँ वोट दिया नहीं जाता है, खरीदा जाता है" | फिर भारत के प्रजातंत्र का नग्न सत्य छिपा कहाँ है किसी से ?

प्रत्येक आतंकवादी देश का नाश ही चाहता है | वह भला विकास, सृजन, उन्नति क्यों चाहेगा ?

कहाँ करना है बमों की बरसात, वह जानते हैं

हरेक आतंकवादी के यही ख़्वाब होते हैं |

योगेन्द्र प्रताप 'मौर्य' को 'बाबू जी के कंधे' की चिंता है | बाबूजी के कंधे बच्चों की बेरोज़गारी, प्रजातंत्र की वायदाखिलाफी, सांप्रदायिकता की आड़ ले जगह-जगह भड़काए दंगों का बोझ कब तक सह पाएँगे भला ? रोज़गार-सृजन के वायदे खूब करती है सरकार | परन्तु निराशा, जनजन की ख़ुशी की हत्या कर रही है दिनदहाड़े | चारों ओर अत्याचार, व्यभिचार, दुराचार का बोलबाला है | फिर यहाँ कौन अमन चैन की वंशी बजाएगा | रामराज्य की कल्पना आकाश कुसुम बनकर रह गई | कारण घृणा, द्वेष, वैमनस्य की आग में सब स्वाहा हो गया | मोहनी पाण्डेय ठीक ही कहते हैं- "शकुनि की चालों में फंसा हर वीर है / एक नहीं कई-कई दु:शासन खींच रहे चीर है" |

(मोहनी पाण्डेय, नवनिकष, फरवरी २०१८, पृ.37)

कहने को तो सब कुछ कुशल है पर यह आत्मवंचना है | कारण, कुशलता कहीं नहीं है | दूर-दूर तक निराशा, हताशा का रेगिस्तान पड़ा

है | इसे ही डॉ. सुरेश उजाला व्यक्त करते हैं कि आज के वातावरण में विष घुला हुआ है | जहाँ जाएँ, तड़प, विवशता, पराजय, विश्वासघात :

कशमकश में ज़िन्दगी औंधी पड़ी है

प्रश्न बनकर सामने बिटिया खड़ी है

रास्ते में बेड़ियाँ हैं छलकपट की

हौंसले के हाथ बांधे हथकड़ी है ||

(प्रगतिवार्ता, साहिबगंज, पृ.41)

उमाश्री (प्रोत्साहन : महिम सेतपाल, मुंबई) को इसलिए क्रोध और झल्लाहट है कि जो देश को आजीवन लूटते रहे, उनके मरने पर परचम झुकाना क्या उसका अपमान नहीं है ?

जिन्होंने लूटा है देश को उनके मरने पर

क्यों मेरे देश के परचम झुकाए जाते हैं |

इतना हीं नहीं, ये पीर पैगंबर, मंदिर, मस्जिद है मजहबों की दुकानें |जब चाहो, जहाँ चाहो, आसानी से दंगे कराए जाते हैं :

ये मजहबों की दुकानें है, यहाँ पै ठेके से

जहाँ कहो, वहीँ दंगे कराए जाते हैं |

विडंबना, विसंगति ऐसी है कि जो नेता उड़ाते थे शान्ति कपोत, वही बंगले में उसे भोज में उड़ाते हैं | शान्ति कपोत कैसे हो जाता है पेट कपोत | उमाश्री देश की दुर्व्यवस्था, मूल्य-संकट, मूल्य- क्षरण, बेटियों

की कुर्बानी, किसानों की आत्महत्या आदि पर धारदार व्यंग्यबाण बरसाती है :

देश सेवा की राहें कड़ी हो गइ

कुर्सियां आदमी से बड़ी हो गई |

डॉ. एक्टन ने लिखा है की सभी सत्ताएं भ्रष्टाचार करती हैं | निरंकुश सत्ता निरंकुशता से भ्रष्टाचार फैलाती हैं-

All power corrupts and absolute power corrupts absolutely. धर्म, मज़हब, मंदिर, मस्जिद भी विघटन, दंगों की भूमि बन गए है :

नकाब धर्म का चेहरे से उड़ गया ऐसे

कि संत थानों में जेलों में पाए जाते हैं |

यह मूल्यक्षरण, नीति, नियम, मर्यादा का हनन आखिर मनुष्य का कितना हित साध सकेगा ?

प्रगति गुप्ता की चार कविताएँ हैं- 'अल्हड़-सा सृजन' , 'काल की माँग' , 'रीले वासन' | पहली कविता में हवा के अल्हड़पन को व्यक्त किया गया है | वह अनपढ़, अल्हड है, मासूम-सा है और उसका व्यवहार ? "इनकी मदमस्ती में देखिए / कैसे पत्ते, फूल और / उनसे जुड़े रंग / हर पल / सब विखरने को तैयार" / ऐसी ही चाहतें होती हैं निरा मासूम | कुछ-कुछ अल्हड़ हवाओं की तरह | हम उसी में बंधे, फँसे लीन निरंतर चलते रहते हैं | एक मोहक बंधन में बंधे, फँसे फिर भी प्रसन्न, मस्ती में लीन | सृजन में पक्षी शावक होते हैं | माँ उसे अधपचा दाना खिलाती

है | एक दिन वह बड़ी हो जाती है | सीमाहीन गगन में विचरने लगती है |

"कलरव का सर्वत्र फैलकर / आकाश हो जाना देखते जनक..... / खुश होते पुन: स्वयं को समेट / नव नीड की नींव रख" |

(मधुमती, मई २०१८, पृ.38)

जब पूरे ब्रह्माण्ड में एक ईश्वर ही था, कुछ नहीं था, तो वह भी अकेले अकेले ऊब गया | उसने घोषणा की "एकोड़हम् बहुस्याम" | मैं एक हूँ अनेक हो जाऊँ | सृजन कायही भाव है | काल की माँग में मनुष्य की चाह मिटती ही नहीं है | एक इच्छा पूरी हुई, दूसरी सामने खड़ी है | फिर उसकी पूर्ती में लग गए- "हर काल की होती है छोटी-सी माँग.....! हर इंसान विवश / इसी मांगे और पूर्ती और पूर्ती के चक्र में उलझा हुआ" |

(मधुमती, मई २०१८, पृ.38)

दिनकर ने उर्वशी में लिखा है कि मनुष्य जो पा लेता है, भोग लेता है, उसके प्रति विरक्त हो जाता है | फिर नए के संधान में लग जाता है |

वश में आई हुई वस्तु से,

उसको तोष नहीं है,

जीत लिया जिस को,

उससे संतोष नहीं है |

गले में लाख सुगन्धित माला हो, वह आकर्षित नहीं करती है, क्योंकि वह प्राप्त हो गई है | जिसको जीत लिया, उससे विकर्षण

उत्पन्न हो जाता है और मनुष्य इसी चक्र में घूमता रहता है आजीवन नितनूतनता की चाह लिए | यही है काल की माँग | हर इंसान विवश है | इसी माँग और पूर्ती के चक्र में उलझा हुआ रहता है आजीवन / कभी मुक्त नहीं जो पाटा है / और यही जीवन है | यही सत्य है |

कवयित्री ने मनुष्य की तुलना खाली वर्तन से की है | ज़िन्दगी की चिल्लपों, भागदौड़ में इंसान इंसान होकर भी तटस्थ नहीं रहता | भावों से भरा इंसान हो या भोज्य से भरा वासन-दोनों एक समान हैं | अग्निपुराण में बताया गया है :

अपारे काव्य संसारे कविरेव प्रजापति |

यथास्मै रोचते विक्वै तथास्मै सृज्यते ||

यहाँ कवि कभी अक्षर की खेती करता है, तो कभी शब्दों के वस्त्र बुनता है | स्वर-व्यंजन के बाग़ लगाकर मात्राओं की कलियाँ चुनता है- "मैं कवि कृषक के जैसा / करता खेती कविताओं की / और कभी बुनकर के / ढकता आब नरवनिताओं की |

(मधुमती, मई २०१८,पृ.41)

सुदामा कृष्ण से आशा करता है, यह वाजिब नहीं है | यह उसके मान की हत्या है | सुदामा में भी एक चिंगारी छिपी है | काश, इसे वह समझ पाता और कर सकता अपने मान की रक्षा | संजय नायक शिल्प की कविता है 'कान्हा से क्यों आस सुदामा' | यह सुदामा को उसकी पहचान कराने का प्रयास है | मनुष्य अपनी शक्ति, सामर्थ्य पहचान पाए, उसे उजागर करने में लगा दे अपनी पूरी शक्ति, तो उसकी विजय निश्चित है | यह प्रयास परमुखापेक्षित के विरुद्ध 'स्व' की पहचान और आत्मविश्लेषण का है | 'अगले युग में' (विश्वंभर पाण्डेय व्यग्र)

महाभारत का कारण बताया गया है कि अपनों की उपेक्षा सदा महाभारत कराती है | इच्छामृत्यु का वरदान बड़ा अभिशाप बन जाता है |

यह सर्वेक्षणात्मक लेख काव्य की अंतर्यात्रा भले नहीं हो, उसकी प्रदक्षिणा अवश्य है | शरशय्या पर पड़े भीष्म की स्थिति का बोध कर वाणी को विराम देता हूँ : "जो करे नियति जैसा / काल न कर पाता है / सत-असत अंधे हो जाते, पथिक भ्रम जाता है / मौन तपस्या कभी-कभी, घातक बन जाती है / जीवन की ये घाडियाँ पातक बन जाती हैं" | ईश्वर न करे कोई निष्ठा, कर्तव्यपरायणता और प्रतिज्ञा के द्वंद में आजीवन पड़ा रहे पर सत्य-संधान न कर पाए | यह यक्ष प्रश्न पता नहीं कब तक अनुत्तरित रहेगा | पंडित सुरेश नीरव कहते हैं :

संसद में नोट, नोट में संसद भी देखि है

बापू तुम्हारे ख्व्वाब का सौराज कैसा है |

प्रो० एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग, विनोभाभावे-
विश्वविध्यालय,हजारीबाग, झारखंड |

फोन.नम्बर :- 09065197429